23. डबल्यू डबल्यू डबल्यू इनसाइक्लोपीडिया, विकिपीडिया, ऑर्ग/डबल्यू/इंडेक्स. पीएचपी, चाइल्ड मैरिज इन इंडिया पृ० सं0–21
24. डबल्यू डबल्यू डबल्यू यूनिसेफ इन, चाइल्ड मैरिज इन इंडिया (एन एनलाइसीस ऑफ अवलेवल डाटा, 2012), पृ 0सं०– 20
25. वहीं, पृ0 सं0–34
26. वही, पृ0 सं0–34–35
27. वही, पृ० सं0–36
28. वही, पृ0 सं0–14
29. चाइल्ड मैरिज फैक्ट सीट नवम्बर 2011 फाइनल पीडीएफ. पृ० सं0–1–21
30. डबल्यू डबल्यू डबल्यू यूनिसेफ इन, चाइल्ड मैरिज इन इंडिया (एनएनलाइसीस ऑफ अवलेवल डाटा, 2012). पृ० सं0–50
31. चाइल्ड मैरिज इन इंडिया सिचुयसनल एनलाइसिस रिपोर्ट, पीडीएफ, पृ० सं0–141
32. चाइल्ड मैरिज इन इंडिया सिचुयसनल एनलाइसिस रिपोर्ट, पीडीएफ, पृ० स०–361

सत्यभक्त और नवजागरण

महेश्वर प्रसाद सिंह*

हिन्दी नवजागरण का एक महत्वपूर्ण अध्याय नवजागरण और साम्यवादी विचारधारा के आपसी संबंधों का है। हिन्दी नवजागरण और साम्यवादी विचारधारा के सम्पर्क–संवाद को जाँचने–परखने के लिए हमें नवजागरण की दुर्लभ पत्र–पत्रिकाओं के भंडार में गहरी छान–बीन करनी होगी। इस सदी के शुरूआती दशकों में ही ऐसे लेख छपने शुरू हो गए, जिसके सूत्र साम्यवाद के प्रत्यक्ष या परोक्ष जुड़े थे। अभी तक उपलब्ध सूचना सामग्री के आधार पर संभवतः 'अभ्युदय' (साप्ताहिक) के सम्पादक कृष्णकांत मालपीय ऐसे पहले पत्रकार थे, जिन्होंने 1918–1920 में रूसी राज्यक्रांति पर लगातार लिखा और नए युग की आहट दर्ज की। 'संसार संकट' शीर्षक से उनका प्रकाशित धारावाहिक लेख अपने समय में काफी चर्चित रहा था। महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन के साथ साम्यवाद का प्रसार बढ़ा। रमाशंकर अवस्थी की 'बोल्शेविक जादूगर' सोमदत्त विद्यालंकार की 'रूस का पुनर्जन्म', विश्वंभरनाथ जिज्जा की 'रूस में युगांतर', प्राणनाथ विद्यालंकार की 'रूस में पंचायती राज' पुस्तकें 1921 से 1923 के बीच प्रकाशित हो चुकी थी।

सत्यभक्त भारत में साम्यवादी पार्टी के संस्थापक थे। यह तथ्य काफी दिनों तक दबा रहा। पहली बार डॉ. रामविलास शर्मा ने इस पर गंभीरता से विचार करते हुए इस तथ्य को स्थापित किया कि 'यदि किसी एक व्यक्ति को कम्युनिस्ट पार्टी का संस्थापक होने का श्रेय दिया जा सकता है तो वह सत्यभक्त है।'[1] बेशक इस तथ्य को व्यापक स्वीकृति मिलने में दिक्कतें होंगी, क्योंकि एक ओर भारतीय साम्यवाद के इतिहास में अंग्रेजी में प्रकाशित सामग्री ही प्रमाणिक मानी जाती है। दूसरी दिक्कत यह कि सत्यभक्त को अपने जीवन या साहित्य में इतनी अहमियत नहीं मिली कि उन्हें इतना बड़ा श्रेय बेहिचक दे दिया जाए। अंग्रेजी से प्रमाणित तथ्यों–तर्कों का आतंक–वर्चस्व जैसा है, उसमें हिन्दी में हुए काम में सत्य स्थापना की स्वीकृति मनवा लेना आसान नहीं होता, वह भी तब, जब एक से अधिक कम्युनिस्ट पार्टियाँ हैं और उन सबके इतिहास अपने–अपने तरीके से अलग हैं। इससे भी बड़ी मुश्किल यह कि इन सभी पर आज तक वर्चस्व अंग्रेज लोगों का ही है, जिनसे यह उम्मीद करना कि वे इतना बड़ा श्रेय हिन्दी के एक गुमनाम से रहे पत्रकार को सौंप देंगे, व्यर्थ है।

***शोध छात्र, इतिहास विभाग, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर**

भारतेन्दु युग की गद्य शैली में राजनीति और अर्थशास्त्र की समस्याओं पर यदि कोई लिखे तो उसका गद्य सत्यभक्त के गद्य जैसा होगा। हिन्दी में समाजवादी चेतना का प्रसार भारतेन्दु युग की शैली से जुड़ा हो, यह बात सिद्ध करती है कि वह प्रसार कितना स्वाभाविक और सहज था।[2]

सत्यभक्त का सार्वजनिक जीवन किशोर उम्र से ही शुरू हो जाता है। उनका जन्म भरतपुर, राजस्थान में 2 अप्रैल 1897 ई. में हुआ। उनके पिता कुंदनलाल वहीं रियासत के मिडिल स्कूल में प्रधानाध्यापक थे। 40 साल नौकरी करने के बाद इंस्पेक्टर के पद पर पहुँचे थे। उनके पास कलकत्ते से प्रकाशित 'भारतमित्र' (साप्ताहिक) नियमित आता था। पिता का झुकाव भी स्वदेशी की ओर था। इसलिए सत्यभक्त में राष्ट्रीय संस्कारों का आना स्वाभाविक था। 'भारतमित्र' में खास तौर से क्रांतिकारियों खुदीराम बोस, बारीन्द्र घोष, अरविंद घोष इत्यादि के कारनामों में उनकी गहरी दिलचस्पी रहती थी। उनके उत्तेजक कारनामों से किशोर सत्यभक्त अभिभूत हो जाते थे। हाई स्कूल में उनका एक सहपाठी था शंकरलाल वर्मा। एक दिन 'आनंदमठ' की 'वंदे मातरम्' की एक पंक्ति कहने पर सने दूसरी सुना दी और इस तरह दोनों अंतरंग बने। उसके घर में राधामोहन गोकुल द्वारा संपादित 'सत्य सनातन धर्म' सप्ताहिक आता था। सत्यभक्त उसमें छपने वाले क्रांतिकारी विचारों से बहुत प्रभावित थे। 'प्रताप' प्रकाशित होते ही प्रवेशांक से ही उनके पाठक बन गये। उस पत्र ने राष्ट्रीय भावों के निर्माण में गहरा योगदान किया। लेकिन, उनका कार्यक्षेत्र व्यापक जगहों में रहा। वे एक जागरूक और प्रबुद्ध किशोर के रूप में कुछ करने की उतावली और उत्साह में रहते थे। इस उम्र का एक दिलचस्प वाकया है। बात सन् 1912–13 की है। वे भरतपुर में स्कूली छात्र थे। कौतूहल और अधकचरी जानकारी के आधार पर उन्होंने मैनसिल, पोटाश, आंवलासार और गंधक को मिलाकर अनाड़ीपन से परीक्षण किया कि अचानक विस्फोट हो गया। नतीजतन उनके बाएँ हाथ की ऊँगली का तिहाई भाग उड़ गया। जलने के घाव भरने में तीन महीने लग गए। सहपाठियों ने यह अफवाह फैला दी कि सत्यभक्त क्रांतिकारी हो गया है। लेकिन सत्यभक्त में एक ऐसी जिज्ञासा थी, जो उन्हें आसपास की रचनात्मक गतिविधियों से जुड़ने को प्रेरित करती रही। वे कुछ सार्थक करने की डगर तलाशने लगे। भरतपुर में 1912 में 'श्रीहिन्दी साहित्य समिति' की स्थापना हुई थी। इसके समारोहों में वे लगातार शिरकत करते थे। ब्रजभाषा के प्रसिद्ध कविरत्न सत्यनारायणजी चिकित्सा के सिलसिले में कुछ महीने तक भरतपुर में रूके तो सत्यभक्त उनके संपर्क में आए। उनके मधुर–मंजुल व्यक्तित्व की छाप किशोर सत्यभक्त पर पड़ी। उनके निधन पर सत्यभक्त ने उनका जीवन–वृतांत 'विधार्थी', मई 1999, इलाहाबाद में लिखा कि कविता–कानन के कोयल माने जाने वाले

सत्यनारायण कविरत्न सिर्फ श्रृंगार और भक्ति की ही नहीं, बल्कि राष्ट्रीय भावों की भी रचनाएँ लिखते थे। उनकी ऐसी कविताएँ जब महात्मा गांधी, तिलक, गोखले या सरोजनी नायडू की सभाओं में पढ़ी जाती थीं, तो श्रोतागण भाव–विभोर हो जाते थे।[3]

कविरत्न सत्यनारायणजी ऐसे पहले व्यक्ति थे, जिनके संपर्क ने सत्यभक्त को सृजन की ओर प्रेरित किया। उन्हीं के द्वारा 1913 में उनका परिचय पत्रकार बनारसीदास चतुर्वेदी से हुआ। 1913 में प्रसिद्ध क्रांतिकारी राजा महेन्द्र प्रताप 'प्रेम' महाविद्यालय के वार्षिकोत्सव में वृदावन आए थे। सत्यभक्त उन्हें देखने–सुनने वृंदावन पहुँच गए। वहीं उनकी मुलाकात 'आर्यमित्र' के सम्पादक लक्ष्मीधर वाजपेयी से हुई। इन संपर्कों से सत्यभक्त को ऐसी राह सूझ रही थी–जिस पर चलकर वे अपनी आकांक्षा और उत्साह को पूरा कर सकते थे। उनके एक अन्य सहपाठी निरंजन शर्मा भी जागरूक युवक थे, जो उर्दू पत्रकारिता से 'श्री वेंकटेश्वर समाचार' के संपादक तक बने। ऐसे सचेत और सक्रिय साथियों के साथ बहस मुसाहबा होते, राजनीति पुस्तकों का भी लगातार अध्ययन चल रहा था। सत्यभक्तजी उन दिनों 'अंडर ग्राउंड रशिया' और 'निहलिस्ट रहस्य' (बंगला) जैसी क्रांतिकारी पुस्तकें और उपन्यास पढ़ते थे, लेकिन उनके जीवन पर सबसे गहरा असर जिन पुस्तकों का पड़ा, उसमें तीन का उन्होंने खुद उल्लेख किया है। सखाराम गणेश देउस्कर की 'देशेर कथा' का अनुवाद 'देश की बात', 'आंनदमठ' और 'जापान का उदय' का। धीरे–धीरे राजनीतिक पगडंडी स्पष्ट होने लगी थी। उस पर चलते हुए उन्होंने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा।

सत्यभक्त में राजनीति और साहित्यिक सक्रियता के साथ–साथ जनसेवा की भावना भी बचपन से ही रही। 1916 में वे हरिद्वार कुंभ में 'भारत सेवक समिति' के स्वयंसेवक की हैसियत से गए। वहाँ उनका परिचय प्रसिद्ध क्रांतिकारी नारायण प्रसाद अरोड़ा से हुआ। यह रिश्ता अंत तक बना रहा। कानपुर में दोनों साथ मिलकर क्रांतिकारी कार्यों में लगे रहे। इसी कुंभ यात्रा में उनकी दुर्लभ मुलाकात महात्मा गांधी से हुई। वे सहज ही अंतरंग बन गए। उस समय महात्मा गांधी ने साबरमती आश्रम की स्थापना भी नहीं की थी। अहमदाबाद में एलिस ब्रिज से एक मील दूर कोचरव गांव के पास किराए के मकान में आश्रम का काम होता था। वहाँ रहने वाले 30–40 लोगों में ज्यदातर दक्षिण अफ्रीका से ही गांधीजी के साथ आए थे। सत्यभक्त ने तीन–चार महीने रहकर आश्रम की सादगी और श्रम संस्कार अर्जित किए। जाड़े के मौसम में पानी भरने का दायित्व निष्ठा से निभाया और महात्मा गांधी के साथ चकी पीसने का दुर्लभ संयोग भी हासिल किया। उन्होंने गांधीजी की 'सर्वोदय' और 'जेल के अनुभव' का हिन्दी अनुवाद भी किया। वहाँ नियमित पढ़ाई जाने वाली तमिल भाषा तो नहीं सीख पाए, लेकिन बंगला और

गुजराती सीख ली। इन दो भाषाओं से अनुवाद भी करने लगे। आश्रम में रहने के दौरान उनकी गांधीजी के पुत्रों, भतीजों से दोस्ती और अंतरंगता भी विकसित हुई। वहाँ उनका परिचय काका कालेलकर, विनोबा भावे और महादेव देसाई जैसे प्रसिद्ध गांधीवादियों से हुआ। वहीं उन्होंने प्रेस का काम भी सीखा, लेकिन अहिंसा में पूर्ण आस्था नहीं होने के कारण वे वहाँ टिक न सके। बावजूद सादा जीवन और श्रम संबंधी विचारों के मामले में उन पर ऐसा प्रभाव पड़ा, जो पूरे जीवन कायम रहा। तभी बंबई में कांग्रेस अधिवेशन आयोजित हुआ। वहीं से वे मुंबई पहुँच गए। बाद के दिनों में सन् 1918, 1919 एवं 1920 में भी वे कुछ महीनों के लिए आश्रम में आते रहे। गांधीजी तो चाहते थे कि सत्यभक्त स्थायी रूप से रह जाएँ। लेकिन सत्यभक्त ने ऐसा नहीं किया। लिखाः 'कुल मिलाकर एक वर्ग गांधीजी के पास रहा। मैंने उनकी महानता का तो अच्छी तरह अनुभव किया और जनता पर उनके अद्‌भूत प्रभाव का रहस्य भी समझा। लेकिन उनके अहिंसा सिद्धांत से मैं पूरी तरह सहमत नहीं हो सका।' इसी असहमति ने सत्यभक्त को गांधीवादी बनने से रोका और क्रांतिकारियों से जोड़ा। अपने तरीके से उन्होंने अपने को आजन्म क्रांतिकारी कार्यों में ही खपा दिया। लेकिन उनके व्यक्तित्व में रहन–सहन और व्यवहार में गांधी आश्रम के प्रवासों का गहरा असर अंत–अंत तक बना रहा।[4]

सत्यभक्त ने सन् 1916 से ही लिखना शुरू कर दिया था। उनका पहला लेख 'प्रो. धोंडो केशव कर्वे का जीवन–चरित्र' 'स्त्री दर्पण' (इलाहाबाद) में छपा था। इस पत्र के प्रकाशन से नेहरू परिवार की रामेश्वरी नेहरू जुड़ी हुई थीं। इसी पत्र में उन्होंने 'प्राचीन भारत में स्त्रियों के अधिकार' और 'भूत रहस्य' जैसे 30–40 पत्रों के लेख लिखे। इन लेखों को पढ़कर विजयलक्ष्मी पंडित बड़ी प्रभावित हुई और सत्यभक्त को बुलाकर उनसे बातचीत की। वे समकालीन समय के महत्वपूर्ण व्यक्तियों का जीवन चरित्र लिख रहे थे, जो सरस्वती, मर्यादा, हितकारिणी, ललिता, प्रतिभा जैसी पत्रिकाओं में छप रहे थे। इस तरह लगभग 100 लेखों के छपने के बाद उनकी गणना पत्रकार–लेखक के रूप में होने लगी। पंडित सुन्दरलाल उन दिनों 'भविष्य' निकालते थे। उन्होंने सत्यभक्त को उस पत्र में काम करने के लिए इलाहाबाद बुला लिया। 6 अप्रैल 1919 को वे इलाहाबाद आए।[5] संयोग ऐसा की उसी दिन सबसे बड़ी राजनीतिक हड़ताल हुई थी। लगभग 50 हजार लोगों की विराट सभा पहली बार देखी। विदेशी वस्तुओं की होली जाई जा रही थी। उस दिन पूरे शहर में एक पैसे का भी कारोबार नहीं हुआ। यहाँ तक कि अर्थी के लिए बांस तक नहीं बिकी। बांस वाले ने कहा कि ऐसे ही बांस उठा लो। आज मैं बिक्री नहीं कर सकता। सत्यभक्तजी को 'भविष्य' के दतर पैदल जाना पड़ा। 'भविष्य' में काम करते हुए पंडित सुन्दरलाल जी के यहाँ जवाहरलाल नेहरू, पुरूषोत्तम दास टंडन जैसे अनेक व्यक्तियों से मिलने, भेंट करने और परिचय कायम करने का

सुयोग बना। 'भविष्य' में उनके एक और वरिष्ठ सहयोगी थे अकबर अली सोख्ता। सत्यभक्तजी की 1954 में कानपुर के गंगा पुल के पार बने आश्रम में सोख्ताजी से मुलाकात भी हुई थी। पंडित सुंदरलाल अपने क्रांतिकारी और जोशीले तेवर से वातावरण को और प्रभावित करने में लगे थे। अंततः सरकार का कोप हुआ और 17 अंकों के बाद पांच हजार की जमानत न चुका पाने में 'भविष्य' को बंद करना पड़ा था।[6]

सीपीआई के डॉ. गंगाधर अधिकारी ने भी अपनी पूरी धारणा में परिवर्तन करते हुए सत्यभक्त के योगदान को स्वीकार किया। अपने विस्तृत साम्यवादी इतिहास के दूसरे खं डमें उन्होंने सत्यभक्त से जुड़े काफी दस्तावेज संकलित किए। डॉ. अधिकारी ने अन्य लोगों के भी उद्धरणों को लिया, जो सत्यभक्त के प्रतिकूल थे। सत्यभक्त ने उन प्रसंगों में अपना स्पष्टीकरण यथास्थान दिया है। एक स्तर पर उपेक्षित रहने के बावजूद दूसरे स्तर पर वे महत्वपूर्ण भी बने। सत्यभक्त इतने से संतुष्ट थे कि उन्होंने जो थोड़ा सा काम किया, वह ईमानदारी से किया। यश की अभिलाषा नहीं की। कुर्ता–पजामा और बंडी। नियमित जीवन। प्राकृतिक चिकित्सा के अभयस्त। प्राणायाम। कर्मठता ऐसी कि 90 साल की आयु तक लेखन, पत्राचार करते रहे। कभी अपने अतीत को भुनाने का कोई उपक्रम भी नहीं किया। नारायण प्रसाद अरोड़ा ने जब 60वीं वर्षगांठ का प्रस्ताव रखा तो उन्होंने मना कर दिया। खुद को इस लायक नहीं समझा। आत्मकथा लिखने का प्रस्ताव इसलिए ठुकरा दिया कि अपने जीवन को इस योग्य नहीं समझा। संकोच और विम्रता स्थायी भाव बनी रही। अपने जीवन को तिल–तिल खपा देने, शरीर गलाकर खुद को उत्सर्ग कर देने वाले ऐसे ही लोगों की कतार थी, जिसने हिन्दी नवजागरण का अमर अध्याय रचा था। सत्यभक्त को समाज से कोई शिकायत नहीं रही। उन्हें कोई मान दे या न दे, उनकी निस्पृहता ऐसी थी कि उन्हें कभी किसी चीज की कोई आकांक्षा नहीं रही। 3 दिस्म्बर को मथुरा के उसी आश्रम में उनकी मौत हुई। एक कर्मठ जीवन का अंत हुआ। निःसंदेह भारतीय साम्यवाद की पृष्ठभूमि के निर्माण में सत्यभक्त के योगदान को अहमियत मिलना मुश्किल है, लेकिन साम्यवादी सोच के निर्माण में। उनकी भूमिका परख–पहचान की जानी चाहिए, तभी सही जड़ों तक पहुँचा जा सकेगा।

संदर्भ सूची :

1. भारत में अंग्रेजी राज्य और मार्क्सवाद 2, पृ. 407
2. वही, पृ. 410
3. बोल्शेविज्म क्या है, सत्यभक्त, 1924
4. श्रमजीवियों का संदेश, सत्यभक्त, 1923
5. नगवजागरण, साम्यवाद और सत्यभक्त, ले. कर्मेन्दु शिशिर, समाचार दीपावली 2009, पृ. 339
6. वही, पृ. 339